© UNIVERSAL RESEARCH REPORTS | REFEREED | PEER REVIEWED
ISSN: 2348 - 5612 | Volume: 04 Issue: 03 | July - September 2017

लोककथा परिभाषा एवं उत्पत्ति

डॉ राम मेहर सिंह (एसोसिएट प्रोफेसर), हिन्दी विभाग
छोटूराम किसान स्नातकोत्तर, महाविद्यालय, जीन्द।

ISSN : 2348-5612 © URR

यह तो नि: संकोच कहा जा सकता है कि आधुनिक युग की अपेक्षाकृत विकसित साहित्य की धारा की परम्परागत गंगोत्री लोकसाहित्य में ही है। यह मौखिक साहित्य, विविध संस्कृतियों का दर्पण है। इसमें परम्परागत विश्वास, आचार-विचार, प्रथाएँ, जीवन के हर्ष-विषाद, अतीत-वर्तमान सभी कुछ सुरक्षित हैं। इस लोकसाहित्य में लोककथा का स्थान तो और अधिक महत्वपूर्ण है। व्यापकता और प्रचुरता की दृष्टि से इसका मूल्य नि:संदेह अवर्णनीय है। भारत तो लोककथाओं का अनन्त सागर है। सर्वप्रथम संसार के प्राय: सभी सभ्य देशों के कथा-साहित्य पर प्रचररूपेण पड़ा है। इन कथाओं के यूरोपीय देशों में प्रचार की कहानी बड़ी लम्बी है। सर्वप्रथम इन कहानियों का अनुवाद अरबी और पहलवी भाषाओं में हुआ और इसके पश्चात् यूरोप की विभिन्न भाषाओं में इनके अनुवाद प्रस्तुत किए गए । यूरोप में प्रचलित 'इसाप्स फेबुल्स' (ईसप की कहानियों) में भारतीय प्रभाव स्पष्ट दृष्टिगोचर होता है।

समस्त मानव समूह मे दो प्रकार की कथाओं का रूप पाया जाता है। एक रूप तो वह है जिसमें तत्कालीन घटनाओं तथा अनुभवों का संलाप-शैली में यथार्थ वर्णन होता है। नृतात्विक दृष्टि से इसका अध्ययन अवश्यक है क्योंकि इनमें न तो स्थायित्व होता है और न साहित्यिक सौंदर्य ही। इनका क्षेत्र अत्यन्त सीमित होता है। ये कहानियाँ आगे चलकर 'मिथ' या पौराणिक कथाओं का रूप धारण कर लेती है। कुछ कहानियों में लोककथा के तत्व मिल जाने के कारण उनका स्थान मौखिक-कथा-साहित्य परम्परा में आजाता है। कथाओं का दूसरा रूप वह है जिसमें वे अपनी कथावस्तु तथा कथात्मक शैली के कारण साहित्यिक सौंदर्य प्राप्त कर लेती है। इनका रूप गद्यात्मक तथा पद्यात्मक दोनो प्रकार का होता है।

पौराणिक कथा तथा लोककथा :-

पाराणिक कथा तथा लोककथा दोनों ही आदिकालीन-मानव के मौखिक साहित्य कहे जा सकते है। दोनों में कथात्मक ढंग से बात कही जाती है परन्तु कथा का आधार दोनों का भिन्न-भिन्न होता है। पौराणिक कथा को केवल कथा या आख्यान कहा जा सकता है। पौराणिक इसलिए कहा जाता है क्योंकि ये कथाएँ पुराणों में पाई जाती है। प्राचीन होने के कारण भी इन्हें पौराणिक कहा जाता है। इन कथाओं में सृष्टि की उत्पति, देवी-देवताओं का वर्णन, प्राकृतिक तत्वों (जल, आकाश, वायु आदि) का निरूपण किया जाता है। इनका लक्ष्य केवल मनोरंजन न होकर सृष्टि के गम्भीर रहस्य को सुलझाना है। आदिकालीन मानव के धार्मिक विधि-विधानों (ब्मतमउवदपंसेए तपजनंसे)के 'क्यों' का उत्तर ये पौराणिक कथाएँ ही देती है। संसार की महान् शक्ति से सम्बद्ध होने के कारण इन कथाओं में 'आश्चर्य' और 'आंतक' की प्रधानता है। परन्तु लोककथाओं में इनके द्वारा मनोरंजन किया जाता है। इनमें 'आंतक' के स्थान पर 'कल्पना' की प्रधानता रहती है। पौराणिक कथाओं को लोग सत्य मानते है परन्तु लोककथाओं को नहीं।

यह बात ध्यान देने योग्य है कि पौराणिक शब्द से तात्पर्य 'पुराणों' से नहीं ह। पौराणिक का अर्थ 'प्राचीन' है जो अधिक संगत है। युग-युगान्तर से जनजाति या समाज की सृष्टि की रचना तथा उत्पत्ति के सम्बन्ध में आधारभूत धारणाको ही पौराणिक कथा कहा जाता है। अत: जिन कथानकों में सृष्टि की उत्पत्ति, रचना, विकास तथा नाश का वर्णन हो, देवी घटना या देवी-देवताओं का वर्णन हो, जिसे जनजाति कल्पना न मानकर सत्य मानती हो, और जो अत्यन्त प्राचीन काल में घटित मानी जाती हो, पौराणिक कथा कही जाएगी। केवल देवी-देवताओं के आने से ही उसे पौराणिक कथा नहीं कहा जा सकता। वास्तव में पौराणिक कथाओं के लिए धार्मिक आस्था की आवश्यकता है।

पौराणिक कथा की उत्पत्ति तथा विशेषताएँ :-

(1) मानवीकरण (च्मतेवदपपिबंजपवद) :-

पौराणिक कथाओं में वर्णित सूर्य, चन्द्र, पृथ्वी, पशु, पक्षी, का चिरण इस रूप में किया जाता है कि वे मानव के समान ही व्यवहार करते दिखाई देते हैं। प्राकृतिक उपकरणों में मानवीय भावनाओं तथा क्रियाओं का आरोप ही मानवीकरण कहलाता है।

अर्थात् पशु,पक्षी, बादल आदि भी मानव की तरह अनुभव करने लगे और कार्य करने लगें। अब आदिम ने देखा कि इन पशु-पक्षियों में मानव से अधिक शक्ति है (क्योंकि वे उस पर आक्रमण भी करते है) जब आदिम मानव ने देखा कि इन पशु-पक्षियों में मानव से अधिक शक्ति है (शक्ति वे उस पर आक्रमण भी करते है) तो उमें देवी शक्ति की सम्भावना कर उन शक्तियों से आंताकित होने लगा। तब उसे यह विश्वास होने लगा कि इन प्रकृति के तत्वों में भी शक्ति है। ये भी मानव की तरह क्रोध-प्रेम, द्वेष-घृणा करते है। इसी को मानवीकरण कहा जाता है।

(2) स्पष्टीकरण (म्गचसंदंजपवद) :-

जब मानव ने देखा कि इन प्राकृतिक तत्वों में शक्ति हैं तो वह इन शक्तियों मे स्पष्टीकरण खोजने लगा। इस रहस्मय जगत को समझने की उत्सुकता उसमें उत्पन्न होने लगी। वह सृष्टि की उत्पति, रचना तथा विकास का स्पष्टीकरण जानने का प्रयास करने लगा। उसे देखा कि मनुष्य में धूर्तता है, वह क्यों है? उसे ज्ञात हुआ कि जानवरों में लोमड़ी धूर्त शिरामणि है अत: समझ गया कि धूर्तता की जननी लोमड़ी है। इसो प्रकार मानव में विद्यमान चालाकी बन्दर से आई है। सूरज, बादल आदि भी मानव की तरह क्रिया करने वाल शक्तियाँ हैं। सूर्य क्रूद्ध होकर जागत को तपाता है। बादल क्रोध में गरजकर सृष्टि को डुबाता है आदि। इन शक्तियों का रहस्य सुलझाने की वह चेष्टा करता है। सृष्टि के रहस्य का स्पष्टीकरण वह सृष्टि की इन्हीं शत्तियों के मानवीकरण द्वारा ही ढूँढता है। इस प्रकार जो कथानक की रचना वह करता है उसे पौराणिक कथा करते हैं।

(3) प्रतिनिधिकरण (त्मचतमेमदजंजपवद) :-

वास्तव में जब पौराणिक कथाओं में किसी लोमड़ी या बन्दर का वर्णन आता है या संसार की किसी घटना का वर्णन आता है तो वहाँ लोमड़ी से तात्पर्य सभी लोमड़ी को समझा गया। बन्दर से सभी बन्दर का अर्थ लिया गया। एक लोमड़ी या एक बन्दर तो प्रतिनिधि के रूप में आए है। इस प्रकार के प्रतिनिधिकरण का अर्थ स्पष्टीकरण ही है। एक बार कुत्ते -बिल्ली लड़ पड़े । वे इसलिए लड़े थे अत: जो एक कथा में हो गया वह आगे भी चलता रहा। आदम और हव्वा ने एक बार पाप किया फिर वही पाप आगे भी चलता गया वहाँ तक कि उसकी संतानों में भी चलता चला जाएगा। आख्यानों की इस विचारधारा का आधार ही प्रतिनिधिकरण है।

(4) प्राचीन अथवा पौराणिक काल (डलजीवसवहपबंस च्मतपवक) :-

पौराणिक कथाएँ प्राचीनकाल से चली आ रही हैं। इन कथाओं का निर्माण कब और किसने किया-इस विषय में कुछ भी नहीं कहा जा सकता। ये मौखिक परम्परा के रूप जनजाति में प्राचीनकाल से ही प्रचलित हैं। ऐसा माना जाता इन कथाओं में आने वाले 'पौराणिक व्यक्ति' पात्र की भाँति ही कार्य करते हैं। वे सृष्टि की रचना से भी पहले विद्यमान थे। ये पौराणिक पात्र ही सृष्टि की रचना करते हैं। ये पात्र काल्पनिक भी होते हैं और यथार्थ भी। परन्तु यह कहना नितांत असंभव है कि इनमें काल्पनिक कौन है और यथार्थ कौन है।

(5) दार्शनिक आधार (चैपसवेवचीपबंस ठेंपे) :-

पौराणिक कथाएँ मानव की काल्पनिक रचना नहीं हैं। इतना अवश्य है कि इन कथाओं में आने वाले सूरज, बादल, पशु-पक्षी आदि मनुष्यों की भाँति कार्य करते हैं जो काल्पनिक-सा लगता है। परन्त् इसमें जनजाति को जितना महत्व दिया गया है यह अवश्य ही गम्भीर विचारों का परिणाम है, केवल कल्पना का नहीं । सृष्टि की उत्पत्ति, रचना, विधि-विधान पर आदिम मानव ने गम्भीर तथा दार्शनिक रूप से विचार किया था जो इन पौराणिक कथाओं का आधार बन गया है। यह दार्शनिक विचार कार्य करता है जैसे एक मनुष्य दूसरे मनुष्य से लड़ता है। अत: यह क्रिया सृष्टि के अन्य स्थानों पर भी अवश्य होती होगी। बादल और सूर्य में भी लड़ाई होती होगी। बादल को सूर्य अपने तीक्ष्ण बाणों से बेधता होगा जिससे खून की धार की तरह पानी निकलता होगा। बस यही दार्शनिक विचार इन्द्र और वृत्र के युद्ध का आधार होगा। यह दार्शनिक विचार मुख्य आधार है। परन्तु इसका तात्पर्य यह कदापि नहीं कि इसमें कल्पना का कोई स्थान नहीं। प्रारम्भ में तो कल्पना का ही सहारा मानवीकरण के लिए किया होग। सूर्य-चन्द्र को 'मानव-राम' मानना यह कल्पना ही तो है। अत: दर्शन के साथ- साथ कल्पना का भी अंश इन कथाओं के जन्म का कारण रहा होगा।

(6) विधि-विधानों का आधार (ठेंपे व ितपजनंसे ंदक बमतमउवदपंसे) :-

© UNIVERSAL RESEARCH REPORTS | REFEREED | PEER REVIEWED
ISSN: 2348 - 5612 | Volume: 04 Issue: 03 | July - September 2017

विधि-विधान आदिकाल से चले आ रहे हैं। इन्हीं का कारण जानने के लिए पौराणिक कथाओं की रचना हुई । विधि-विधानों में दो बातें मुख्य है- विधि (ब्नेजवउ) और निषेध (ज्ंइवव)। विधि से अर्थ है- यह करना है और निषेध का अर्थ है - यही नहीं करना। इन्हीं विधि-निषेधों का सम्बन्ध जब किसी पौराणिक कथा से जोड़ा जाता है तब मनुष्य यह समझता है कि उसने कारण का पता लगा लिया। यदापि अभी और कारण जानने की आवश्यकता है। परन्तु आदिकालीन मानव इस कारण की खोज में अधिक दूर तक जाना नहीं चाहता। 'होली' का त्यौहार क्यों मनाया जाता है? इस पर एक कथा की रचना हुई। एक बार जब शिवजीतपस्या में डूबकर पार्वती को भूल गए तब पार्वती ने कामदेव से उसकी तपस्या भंग करने की प्रार्थना की। कामदेव ने काम बाण छोड़े। शिव जी ने क्रुद्ध होकर अपने तीसरे नेत्र द्वारा उसे भस्म कर दिया। कामदेव की पत्नि रति विलाप करती शिव के पास आई। शिव को दया आई। उन्होंने कामदेव का वर दिया कि तुम बिना शरीर लोगों के मन में रहोगे। कामदेव का दूसरा नाम इसलिए अनंग रखा गया। काम प्रत्येक व्यक्ति के मन को तंरगित करता रहता है। इसी तरंग और उल्लास की अभिव्यक्ति के लिए होली का पर्व मनाया जाता है। इसी प्रकार अन्य विधि -विधानों का समाधान पौराणिक कथाओं से किया गया है।

अन्तरंग और बहिरंग पौराणिक कथाएँ :-

पौराणिक कथाओं के जानने वाले अन्तरंग और बहिरंग दो रूप होते है। किसी भी जनजाति की कथाओं को सभी व्यक्ति जानते है। यह वर्ग 'बहिरंग वर्ग' कहलाता है परन्तु एक वर्ग ऐसा भी है जो कथाओं के वास्तविक रहस्य को जानता है यह 'अन्तरंग वर्ग' होता है। यह कथा के भीतर छिपे अर्थों को भलीभाँति जानता है। यह अपना समय विधिविधानों तथा कथाओ को जानने में लगाता है। इसे 'पुरोहित-वर्ग कहते है। यह 'वर्ग उन विधि -विधानों के पीछे एक दैवी घटना को जोड़ देता है जिससे जनजाति इन विधानों पर आस्था रखे और इन्हें छोड़े नहीं । जनता तो कथाओं का बहिरंग रूप ही जानती है। यही कारण है कि समाज में आदिकाल से लेकर अब तक 'पुरोहितों' का सम्मान है। ऐसी अन्तरंग कथाएँ अपने कथानकों द्वारा विधि-विधानों की पृष्टि करती हैं। इस रहस्य को हर कोई नही जान सकता। इस रहस्य को उचित पात्र पर ही प्रकट किया जाता है और उसी को शिष्य भी बनाया जाता है। यही पर गुरू की महत्ता प्रतिपादित हो जाती है।

लोकवार्ता-क्षेत्र में पौराणिक कथा का भी अत्यन्त महत्व है। डा0 सत्येन्द्र ने इस सम्बन्ध में काफी विचार किया है। उन्हांने कुछ विद्वानों के विचार प्रकट करते हुए लिखा है-''कुछ विद्वानों ने धर्म-गाथा को लोकवार्ताभिव्यक्ति नहीं माना। कुछ का तो कहना यह है कि धर्मगाथा का पूर्व में कुछ भी रूप रहा हो, हमारे समक्ष तो वह महान कवियों की रचना के रूप में आती है, इन विद्वानों का लक्ष्य ईलियड तथा महाभारत जैसी रचनाओं की ओर रहता है। कुछ का विचार है कि लोकवार्तातत्व का सम्बन्ध आदिम-मानव के वर्तमान अवशेषों से होता है किन्तु धर्मगाथा तो अतीतकाल से सम्बन्ध रखती है। यह भी कहा जाता है कि धर्मगाथा में आदिम मानस की अभिव्यक्ति नहीं, क्योंकि आदिम मानस का विकास कुछ निम्न क्रम से हुआ है।

(1) मन :- इस शब्द का प्रयोग एक रहस्यात्मक शक्ति के अर्थ में मैलेनेशियन द्वीपसमूह में होता है। यह वस्तुतः आत्मा अथा आत्मशक्ति का भी मूल सार है। कुछ विद्वान इस क्रम विकास से सहमत नहीं। वे आत्मवत्वाद या ऐनिमेटिज्म से ही लोकमानस का मूल मानते है। (2) परा-प्रकृतिवाद - प्राकृतिक पदार्थो के श्रद्धाभयोद्रेकी व्यापारों में किसी शक्ति की उद्भावना। (3) आत्मवत्वाद - आत्मवत् सर्व भूतेष मेरे जैसी बृद्धि, शक्ति, विवेक पशु-पक्षियों तथा पदार्थों में है। (4) पदार्थात्मवाद - समस्त पदार्थो में आत्मा है। (5) देववाद - देवताओं की कल्पना ।

इन विद्वानों से इस पाँचवीं स्थिति पर पहुँचने पर ही धर्मगाथाओं का उदय हुआ। अतः यह मूल लोकमानस से सम्बद्ध नहीं। भाषा में भी जैसा कि मैक्समूलर ने माना, पहली अवस्था, धातु निर्माण की है। दूसरी, भाषाओं की मूल जातियों के जन्म की है। इस अवस्था में आर्य, सेमेटिक, टर्की जैसी जाति की भाषाओं ने जातिय धर्म ग्रहण करना आरम्भ किया। तीसरी, धर्मगाथा पूरक है, जिसमें मूल शब्दों ने विकार युक्त होकर गाथाओं को जन्म दिया। इस अवस्था पर आकर धर्मगाथाएँ बनी। चौथी, लौकिक, इस अवस्था पर पहुँचकर राष्ट्रीय भाषाओं का निर्माण हुआ। धर्मगाथाओं के निर्माण में भाषा का बहुत हाथ रहा है। मैक्समूलर ने यहो धारणा बना ली थी कि धर्मगाथा केवल भाषा का रोग 'मैलेडी ऑव लेग्वेज है। भाषा जब अपनी श्लेष-शक्ति अथवा असमर्थता के कारण एक के स्थान पर साम्य के कारण दूसरे शब्द को ग्रहण कर लेती है और अर्थ-विषयक परिवर्तन भी पैदा कर देती है, तब धर्मगाथा जन्म लेती है। अतः धर्मगाथा का सम्बन्ध लोकमानस से नहीं हो सकता। फिर धर्मगाथा से लोकगाथाएँ उत्पन्न हुई हैं। अतः लोककथाओं और लोकवार्ता की जननी को पृथक् ही मान्यता देनी पड़ेगी। (2)

© UNIVERSAL RESEARCH REPORTS | REFEREED | PEER REVIEWED
ISSN: 2348 - 5612 | Volume: 04 Issue: 03 | July - September 2017

डा0 सत्येन्द्र उपर्युक्त विद्वानों के मतों से कतई सहमत नहीं है। जो विद्वान धर्मगाथा को लोकवार्ताभिव्यक्ति नहीं मानते और उन्हें महाकवियों की रचना मानते है, यह डा0 सत्येन्द्र को स्वीकार नहीं। वे धर्मगाथा को महाकव्य स पूर्णजन्मा मानते है। उसी पूर्व रूप के कारण ही वे धर्मगाथाएँ है। उसी महत्व के कारण वे महाकाव्यों की इसी रूप में विषय बनी। दूसरा मतभेद डा0 सत्येन्द्र का उन लोगों से है जो धर्मगाथा को केवल अतीतकाल से सम्बन्धित मानते है। उनका कहना है कि धर्मगाथाओं का सम्बन्ध उतना ही वर्तमान से है जितना लोकवार्ता के आदिम अवशेषों का वर्तमान से है। उनका तर्क है कि यदि धर्मगाथा का अतीत से सम्बन्ध है तो लोकवार्ता के आदिम अवशेषों को क्या बिना अतीत से सम्बन्धित किए आदिम अवशेष माना जा सकता है। (3) तीसरा मतभेद उनका वहाँ है जहाँ आदिम मानस के विकास-क्रम में पाँचवीं स्थिति में पहुँचने पर धर्मगाथाओं के उदय की स्थिति मानी गई है। डा0 सत्येन्द्र यहाँ प्रश्न करते हैं कि क्या इस पाँचवीं अवस्था तक पहुँचेन पर आदिम मानस की सत्ता मिट चुकी थी? देववाद क्या लोकमानस की ही उद्‌भावना नहीं ? यह भी अब स्पष्ट हो गया है कि लोकवार्ता का मूल-लोकमानस से सम्बन्ध अनिवार्य नहीं । लोकमानस की जो दाय रूप में स्थिति है, उनकी अभिव्यक्ति भी लोकवार्ता का एक तत्व है। धर्मगाथाओं के विन्यास में लोकमानस व्याप्त है। (4)

इस प्रकार डा0 सत्येन्द्र ने उपर्युक्त विद्वानों के तर्कों को काटकर यह सिद्ध कर दिया कि धर्मगाथा में मूलत: आदिम मानस (च्तपउपजपअम उपदक) ओत-पोत है। उसमें समस्त विकार, विकास और उद्‌भावना लोकमानस के परिणाम से है, संस्कृत-मानस की मनीषिता उसमें नहीं। (5) फ्रेजर का भी प्राय: यही मत था कि लोकवार्ता का मूल-मानस मैजिक (टोना) भाव का परिणाम है। डा0 सत्येन्द्र का मत इसी से प्रभावित है। अत: अब यह सिद्ध है कि धर्मगाथाएँ लोकसाहित्य का ही एक अंग है और इसका अध्ययन भी उतना ही आवश्यक है जितना लोकगाथा, लोकगीत, लोकनाट्य आदि का। अन्तर केवल इतना ही है कि विकास की विविध अवस्थाओं में से गुजरती हुई ये गाथाएँ हुई ये गाथाएँ धार्मिक अभिप्रायों से अधिक सम्बद्ध हो गई है।

पौराणिक कथा तथ्या धर्मगाथा का रूप : परिभाषा -

(1) डा0 सत्येन्द्र के शब्दों में लोकसाहित्य का वह अंश जो रूप में प्रकटत: तो होता है कहानी, पर जिसके द्वारा अभीष्ट होता है किसो ऐसे प्राकृतिक व्यापार का वर्णन जो साहित्य -रत्रष्टा ने आदिम काल में देखा था और जिसमें धार्मिक भावना का पुट भी है - वह धर्मगाथा कहलाती है। इसके अतिरिक्त समस्त प्राचीन मौखिक परम्परा से प्राप्त कथा तथा गीतसाहित्य भी लोकसाहित्य कहलाता है। (6)

(2) जान रस्किन के शब्दों में 'एक धर्मगाथा अपनी सरलतम परिभाषा में एक कहानी है जिससे एक अर्थ सम्बद्ध है, ऐसा अर्थ जो प्रथम प्रकट होने वाले अर्थ से भित्र हो। ऐसी कहानी में ऐसा कोई अभिप्रेत अर्थ है यह उस कहानी की कुछ उन परिस्थितियों से साधारणत: विदित होता है जा असाधारण होती है, प्राकृति के इन दिव्य-व्यापारों को देखा और इन्हें मूर्त्तरूप में शब्द का अर्थ माना, अथवा शब्द के साधारण अर्थ में अस्वाभाविक होती है। (7)

(3) सोफिया बर्न धर्मगाथाओं को कारण-निरूपक कहानी मानती है। इसमें विश्व, उसकी उत्पत्ति, प्रलय, जीवन, मरण, मनुष्य, पशु, जातीय-भेद, व्यवसाय-भेद, धार्मिक उपचार, पैतृक-प्रथाएँ तथा रहस्मय व्यापारों के कारणों की व्याख्या रहती है। यह कारण प्राय: असंभव ही होता है, पर जो उन धर्मगाथाओं को मानते हैं, वे उन पर विश्वास भी करते है। (8)

हमारी दृष्टि से पौराणिक कथा उन कथाओं को कहते हैं जिनमें सृष्टि की उत्पत्ति, नाश, देवी-देवता तथा दैवी-घटनाओं का वर्णन हो जिसे जनजाति काल्पनिक न मान यथार्थ मानती हो और आदिम काल में हुई घटनाओं में धार्मिक आस्था रखती हो।

लोककथा का स्वरूप और परिभाषा :-

जब से मनुष्य का इस पृथ्वी पर जन्म हुआ है तभी से कहानी का भी जन्म हुआ होगा। यही कारण है कि मानवीय कलाओं में कहानी कहने की कला सबसे प्राचीन है। आदिम युग से ही मानव-मन ने अपनी विचित्र अनुभूतियों को कथा का रूप प्रदान किया और इन कथाओं के माध्यम से ही वह अपने अपरिपक्व और अस्पष्ट जीवन-दर्शन को अभिव्यक्त करने लगा। यह अभिव्यक्ति दो रूपों में हुई (1) पौराणिक कथाओं के रूप में तथा (2) लोककथाओं के रूप में। जिस कथा में कथा-वस्तु तथा उसकी कलात्मक कथना - प्रणाली एक साहित्यिक सौंदर्य प्राप्त कर लेती है लोककथा कही जाती है। लोककथा विश्वव्याप्त है। इसमें लोक जीवन नाना रूपों में प्रकट होता चला आ रहा है। मानव के दुख-सुख, रीति-रिवाज, आस्थाएँ एवं विश्वास इन लोककथाओं में अभिव्यक्त हाते रहते है। लोककथा मौखिक रूप में ही प्राप्त है।

© UNIVERSAL RESEARCH REPORTS | REFEREED | PEER REVIEWED
ISSN: 2348 - 5612 | Volume: 04 Issue: 03 | July - September 2017

लोककथा की परिभाषा देते हुए डा0 सत्येन्द्र ने लिखा है-''लोक में प्रचलित और परम्परा से चली आने वाली मूलतः मौखिक रूप में प्रचलित कहानियाँ लोककहानियाँ कहलाती है।''(9)

वास्तव में कथा की ऐसी मौखिक परम्परा जिसमें लोकमानस के तत्व विशेष रूप से विद्यमान हों और जिनका उदेश्य जन-मनोंरजन के अतिरिक्त प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूप से ज्ञानवर्द्धन भी हो वही हमारी दृष्टि से 'लोककथा' कहलाई जाएगी।

डा0 सत्या गुप्त ने लोककथा की परिभाषा न देकर उसके स्वरूप पर विचार करते हुए लिखा है- ''लोककथाओं में लोक-मानव की सब प्रकार की भावनाएँ तथा जीवन-दर्शन समाहित है। भूत जानने की जिज्ञासु, घटनाओं का सूत्र, कोमल व पुरूष भावनाए, सामाजिक-ऐतिहासिक परम्पराएँ, जीवन-दर्शन के सूत्र सभी कुछ लोककथा में मिल जाते हैं (10)

वास्तव में लोककथा की शास्त्रीय परिभाषा देना अत्यन्त ही कठिन है। इससे पूर्व भी इसकी परिभाषा देने का प्रयत्न कभी नहीं किया गया, प्रत्युत 'लोककथा' संज्ञा को एक साधारण अर्थवाचक शब्द के रूप में ही रहने दिया गया है, जिस प्रयोग, परम्परागत, वृत्तात्मक, विविध व्यंजना-रूपों के लिए किया जाता रहा है। (11)

लोककथा की उत्पत्ति :-

लोककथा की उत्पत्ति के सम्बन्ध में विद्वानों में पर्याप्त मतभेद रहा है। उनके भिन्न-भिन्न मतों को यहाँ प्रस्तुत किया जा रहा है।

(1) प्रसारवाद का सिद्धांत (जैमवतल वि क्पर्निपवद) :-

इस मत के समर्थकों को कहना है कि जिस प्रकार भाषा की उत्पत्ति के सम्बन्ध में निश्चित रूप से कुछ नहीं कहा जा सकता उसी प्रकार लौककथा की उत्पत्ति के सम्बन्ध में कुछ नहीं कहा जा सकता। जिस प्रकार एक स्थान से दूसरे स्थान तक फैलती है और मनुष्य तथा उसके सारे समाज में प्रसरित हो जाती है उसी प्रकार लोककथाएँ भी एक समाज से दूसरे समाज में 'प्रसार' की प्रक्रिया द्वारा पहुँचती है। कुछ विद्वान लोककथाओं का उद्गम -स्थल भारत या मैसोपोटामिया को मानते है। यही से लोककथाएँ विश्व में चारों और फैली। परन्तु यह अतिशयोक्ति पूर्ण कथन है। यदि ऐस सम्भव होता तो संसार की लोककथाओं में काफी समानता होती। प्रत्येक देश तथा जाति की लोककथाओं में कथातत्व की भिन्नता सका प्रमाण है।

आलोचना :-

यह कथन तो सत्य है कि लोककथाओं का प्रसार होता है। वे मनुष्यों से भी तीव्र गाति से यात्रा करती है। जादू के प्रभाव से वह 'सातों समुन्दर' पार कर दूसरे देशों में पहुँच जाती हैं परन्तु यह कहना कि सर्वप्रथम उसकी उत्पत्ति भारत या मैसोपोटामिया में हुई, इसका कोई निश्चित प्रमाण नहीं मिलाता ।

(2) प्रकृतिरूपकवाद (छंजनतम ैलउइवसपेउ वि ब्वेउवहवदपब व्तपहपद) :-

इस मत के विचारको का कथन है कि प्रकृति के जितने रूप एवं घटनाएँ हैं, कल्पना के माध्यम से उनका रूपक बनाकर इन लोककथाओं में उनका सांकेतिक वर्णन किया जाता है। चाँद की कलाओं का घटना-बढ़ना, समुद्र का शांत रहना और पूर्णिमा पर मर्यादाहीन होना, बिजली का गिर पड़ना आदि घटनाएँ देखकर मानव इनको अपनी कल्पना का आधार बनाता है। वह इन्हें भी मानव के रूप में चित्रित करता है, मानवीकरण करता है। एक कम्बलधारी व्यक्ति के शरीर से कम्बल उतरवाने के लिए सूर्य और वायु की शर्त, सूर्य का वायु को इस शर्त में परास्त करना आदि प्राकृतिक घटना को कथा का रूप प्रदान किया गया। यह कल्पना द्वारा ही सम्भव हुआ।

आलोचना :-

यदि इस मत को स्वीकार किया जाता है तो इन लोककथाओं के एक स्थान से दूसरे स्थान पर पहुँचने के लिए 'प्रसारवाद' को मान्यता देनी ही पड़ेगी। क्योकि से कथाएँ हर स्थान पर मिलती है। इसके अतिरिक्त एक महत्त्वपूर्ण बात और है। पीछे पौराणिक कथा की उत्पत्ति के सम्बन्ध में भी यही कारण बताया गया है। जहाँ तक पौराणिक कथा और लोककथा में समानता है वहाँ तक तो यह सिद्वान्त ठीक है परन्तु जहाँ इन दोनों में अन्तर है वहाँ इसका समाधान कैसे हो? अतः यहाँ अन्य सिद्वान्तों का सहारा लेना पड़ जाता है।

(3) मनोविश्लेषणवाद (च्ेलबीव.दंसलजपब वत ैमग वतपहपद) :-

फ्रॉयड के समथकों ने रूपकों का रत्रोत प्रकृतिक घटनाओं को न मानकर यौन–प्रवृतियों को माना है। फ्रॉयड ने मन के दो भाग किए है। चेतन मन (ब्वदेबपवने) तथा अचेतन मन (न्दबवदेबपवने)। अचेतन मन ही हमारी मूल आदिम वासनाओं का केन्द्र है। मानस का अचेतन भाग चेतन से अधिक विस्तृत तथा शक्तिशाली होता है। कामशक्ति का कोष इस अचेतन मन में ही है। वास्तव में अचेतन मन का निर्माण प्रवृत्तिजन्य वासनाओं के दमन में होता है। ये दमित वासनाएँ प्रकाशनद के लिए प्रयत्नशील रहीत है। अचेतन की कामप्रवृत्ति वयस्क दृष्टि से विकृत कामप्रवृत्ति है, जिसकी तृष्ति सामाजिक जीवन में असंभव और अनैतिक है। वे दमित वासनाएँ जिनका हमे कोई ज्ञान नहीं होता, स्वप्नों में, दैनिक जीवन की भूलों में और अधिक प्रबल होने पर मानसिक रोगों में व्यक्त हुआ करती है। इसके कारण व्यक्ति विचित्र, असाधारण व्यवहार करता है पर, कारण वह स्वयं ही समझ नहीं पाता। यदि विश्लेषण के द्वारा यह दमित वासना चेमन मानस में आजाए तो व्यवहार की विचित्रताएँ दूर हो जाती है। इस प्रकार ये यौन–वासनाएँ बाहर निकलने का मार्ग ढूँढती है। इनका रूप बदलने से ही 'लोककथाएँ' उत्पन्न होती है। 'एक राजा की सात रानियाँ थी।' सात रानियाँ ही क्यों? क्योंकि मनुष्य की कामवासना एक नारी से पूरी नहीं होती। वह अनेक से अपने सम्बन्ध रखना चाहता है। उसकी यही वासना अपना चौखटा बदलकर आती है। 'मेरी सात रानियाँ' न कह कर वह अपने चेतन मन को छलता है। जब इस प्रकार 'लोककथा' में सात रानियों की चर्चा मनुष्य करता है तो वह राजा की जगह पर अपने को कल्पित करता है। इन मनोविश्लेषणवादियों का यही कहना है कि लोककथाओं को उत्पत्ति इसी अचेतन–मन में दबी कामवासना ही है जो अपने चौखटे को छिपाकर नक़ाब पहन कर बाहर आना चाहती है।

आलोचना :-

इस मत के अनुवासियों का यह कथन 'लोककथा' के सम्बन्ध में सही हो सकता है परन्तु हर स्थान पर ऐसा ही हो यह सम्भव नहीं। कुछ ही लोककथाओं के सम्बन्ध में यह बात लागू होती है सब के सम्बन्ध में नहीं।

(4) इच्छापूर्तिवाद (क्वबजतपदम वि ॅपेीनिसपिसउमदज) :-

मनोविश्लेषणवादियों के अनुसार अचेतन मन की दमित इच्छाएँ- चाहे वे यौन–सम्बन्धी हों या अन्य – पूर्ति चाहती है। यह पूर्ति स्वप्न, कल्पना आदि के माध्यम से होती है। अपनी इन अपूर्ण इच्छाओं की पूर्ति के लिए ही मनुष्य साहित्य या कला–सृजन भी करता है। इसी की पूर्ति के लिए मानव ने लोककथाओं का किया होगा जिनमें राक्षस, भूत–पिशाच, परियों आदि की कथाओं का जन्म होता है। मनोविश्लेषणवाद से अधिक उपयुक्त यह मत प्रतीत होता है।

(5) व्याख्यावाद (म्ग्चसंदंजवतल व्तपहपद) :-

पौराणिक कथाओं की भाँति ही लोककथाओं का कार्य अपने समय की रीतियों व्यवहारों, प्रथाओं तथा सामजिक रूढ़ियों की मनोंरजन व्याख्या करना होता है। यहाँ तक कि चिकित्सा सम्बन्धी सिद्धान्तों की व्याख्या इन्हीं लोककथाओं के माध्यम से होती है। एक उदाहरण द्रष्टव्य है- चिकित्सा- शास्त्र में लहसुन को अमृत माना गया है। इसमें अम्ल को छोड़कर शेष सभी रस है। अतः संस्कृत में भी इसे 'रसोन' कहा गया है अर्थात जिसमें एक रस 'ऊन' (कम)हो इस सम्बन्ध में कथ इस प्रकार है- सागर मंथन के अवसर पर अमृत निकला तो उसकी प्राप्ति के लिए देवता तथा असुरों में युद्ध होने लगा। तभी गरूड़ जी आकर उस अमृत कलश को उडाकर ले गए। ले जाते समय अमृत कलश के नीचे गिरता भी गया। जहाँ गिरा वहीं वहीं लहसुन उत्पन्न हुआ। इस प्रकार लहसुन की उपयोगिता के लिए लोककथा का जन्म हुआ। इस प्रकार अन्य विषयों करी व्याख्या करने के लिए भी लोककथाओं का जन्म हुआ।

आलोचना :-

इस प्रकार व्याख्यावाद में कथा के अन्त में विधि–निषेध की चर्चा आई है। ऐसा होना कम होना चाहिए ऐसा नहीं होना चाहिए, इन वाक्यों से कथाओं का अन्त हुआ है। परन्तु कथा का प्रारम्भ तो इनसे भी पहले भी चुका है। इस प्रकार यह व्याख्यावाद कथा की उत्पत्ति के कारणों मे से एक हो सकता है परन्तु निश्चित कारण नहीं ।

(6) विकासवाद (जीमवतल वि म्अवसनजपवद) :-

कथा की उत्पत्ति के सम्बन्ध में टायलर (ज्लसवत) का मत है कि संसार में मानव समाज की आधारभूत मानसिक समानता (च्ेलबीपबंस नदपजल वि उंदापदक) के कारण सब स्थान के मनुष्यों का चिन्तन प्रायः एकसा होता है। अतः सभी स्थनों पर एकसी कथाएँ प्राप्त होती है। सिंड्रेला की एक कथा का उदाहरण प्रस्तुत किया जा सकता है। सिंड्रेला की सौतली माँ उस पर

© UNIVERSAL RESEARCH REPORTS | REFEREED | PEER REVIEWED
ISSN: 2348 - 5612 | Volume: 04 Issue: 03 | July - September 2017

अत्यधिक अत्याचार करती थी। एक बार सिंड्रला की सौतेली माँ तथा सौतेली बहिनों ने मिलकर उसे बन्द कर दिया और उसके साथ बुरा व्यवहार किया। परन्तु उसकी असली माँ की आत्मा ने तथा कुछ चूहों ने उसके बन्धन काट कर उसकी सहायता की। वह वहाँ से निकल भागी। भागकर वह अपने प्रिय राजकुमार से मिली और शादी कर आनन्द से रहने लगी। यह कहानी संसार में अलग-अलग रूपों में पाई जाती है और सैकडों रूपों में यह कहनी हमे मिलती भी है।

आलोचना :-

सौतेली माँ का अत्याचारी होना सब स्थानों पर एक-सा पाया जाता है। परन्तु इस चिन्तन की एकता को 'प्रसारवाद' द्वारा भी समझाया जा सकता है। अत: विकासवाद की सार्थकता न्यून हो जाती है। इसलिए यह सिद्धान्त भी अधिक उपयुक्त नहीं ठहरता।

(7) यथार्थवाद (त्मंसपेउ) :-

आदिवासियों की यह प्रवृत्ति रही है कि वे यथार्थ घटनाओं का वर्णन बार बार करते हैं। हर एक से वही घटना दुहराकर कहते हैं। इस प्रकार ये कथाएँ एक से दूसरे, दूसरे से तीसरे के कानों तथा मुख से होकर, बढ़-चढ़ कर, अपना रंग-रूप बदल कर एक नए ढंग में परिवर्तित हो जाती है। इनमें प्राय: अपने देश तथा जन-जाति की बातें जुड़ जाती हैं। इस प्रकार इसका रूप इतना बदल जाता है कि परिवर्तित घटना का पता लगाना अत्यधिक कठिन हो जाता है। इस प्रकार कथानक तो बदल जाते हैं साथ ही पात्र तथा शैली तक बदल जाती है। एक नई कथा ही जन्म ले लेती है जिसका आदि रूप यथार्थ ही होता था।

(8) समन्वयदाद :-

उपर्युक्त सिद्धान्तों में से कोई भी सिद्धान्त लोककथाओं की उत्पत्ति के सम्बन्ध में पूर्ण नहीं माना जा सकता । प्रत्येक सिद्धान्त में कुछ दोष तथा अनुवाद है। उपर्युक्त सिद्धान्तों में से चार सिद्धान्त प्रमुख हैं - (1) प्रसारवाद (2) प्रकृतिरूपवाद (3) मनोविश्लेषणवाद (4)
विकासवाद। इन्हीं सिद्धान्तों को मिलाकर समन्वयवाद की स्थापना हमने की है। लोककथा की उत्पत्ति के मूल में ये ही चार सिद्धान्त प्रमुख हैं।

भारत में लोककथा की परम्परा -

(1) संस्कृत :- भारत वर्ष कहानियों की जन्मभूमि है अत: इसे कहानियों का देश भी कहा जाता है। कहानियाँ वैसे तो समस्त संसार से मिलती हैं परन्तु भारत तो कहानियों का मूल उद्गम ही है। वेद विश्वसाहित्य की प्राचीनतम पुस्तक है। वेद में न जाने कितने वृन्त हैं जो कहानियों के रूप में हैं। ऋग्वेद के कई सूक्तों में जिन्हें संवाद-सूक्त' कहते हैं ऋग्वेद शुन-शेष तथा अन्य प्रसिद्ध कथाएँ उपलब्ध होती हैं। अपाला और आत्रेयी आदि की कथाएँ भी वेद में सर्वप्रथम देखेन को मिलती हैं। इसके अतिरिक्त भार्गव, च्यवन आदि की कथाओं का जन्मदाता भी वेद ही है।

पुराण को वेदों की व्याख्या माना गया है। बिना पुराणों के अध्ययन के वेद को नहीं
समझा जा सकता ऐसा विद्वानों को मत है। वैदिक देवों की व्याख्या पुराणों में ही प्राप्त होती है। इससे यह सिद्ध होता है कि वेदां की कहानियाँ पुराणों की कथाओं में आकार विकसित हुई है।

ब्राह्मण ग्रथों में अनेक कथाएँ प्राप्त होती है। 'शतपथ ब्राह्मण' में उर्वशी और पुरूरवा की प्रसिद्वकथा हैं शुन:शेष की कथा 'ऐतरेय ब्राह्मण' में वणित है। 'शाटय यन ब्राह्मण' में महर्षि वृश की कथा है। 'शतपथ ब्राह्मण' में ही दधीचि की अत्यन्त लोकप्रिय कथा है। संस्कृत में लोककथाओं का अत्यन्त प्राचीन ग्रंथ गुण्ड्य द्वारा रचित पैशाची भाषा में 'बृहत्कथा' है। संस्कृत के नाटककारों का यह प्रेरणाग्रंथ रहा है। शूद्रक, भास, हर्ष आदि अनेक साहित्यकारों को भव्य कथानक देने वाला यही ग्रंथ हैं। संस्कृत में इसके तीन अनुवाद प्राप्त होते हैं।

(1) बृहत्कथा श्लोकसंग्रह:- बुधस्वामी इसके रचयिता हैं। इसके 28 सर्ग तथा 4539 श्लोक हैं।

(2) बृहत्कथा मंजरी :- आचार्य क्षेमेन्द्र इसके रचयिता हैं। बृहत्कथा श्लोक संग्रह 9वीं शताब्दी तथा बृहत्कथा मंजरी ग्यारहवीं शताब्दी की रचना मानी जाती हैं। इसमें 7500 श्लोक हैं।

(3) कथा-सरित्सागर :-आचार्य क्षेमेन्द्र के समकालीन सोमदेव इसके रचयिता है। इसमें कुल मिलाकर 24, 000 श्लोक हैं। इसका अंग्रेजी में अनुवाद पेंजर द्वारा 'ओशन ऑव स्टोरी' के नाम से किया गया है।

© UNIVERSAL RESEARCH REPORTS | REFEREED | PEER REVIEWED
ISSN: 2348 - 5612 | Volume: 04 Issue: 03 | July - September 2017

इस 'बृहत्कथा' का पैशाची मे 'बड्डकहा' कहा जाता है। वास्तव में 'कथा-सरित्सागर' तो इसका संस्कृत अनुवाद हैं। इसमें वासदत्ता सुमनोत्तरा और चैत्ररथी की लोककथा उपलब्ध होती है। देवस्मिता और ग्रुहसेन की कथा भी अत्यन्त प्रसिद्ध कथा है। इसमें अठार खंड है और प्रत्येक खंड में कई कथाएँ है। वास्तव में यह लोककहानियों का ही संग्रह है।

'पचतंत्र' का संस्कृत साहित्य में अत्यन्त ही महत्पूर्ण स्थान है। इसका भी पश्चिम की अनेक भाषाओं में अनुवाद हो चुका है। इन कहानियों ने योरूप की कहानियों को अत्यधिक प्रभावित किया है। यह भारतीय कहानियों का सबसे मौलिक और प्राचीन ग्रंथ माना जाता है। इसके लेखक विष्णु शर्मा हैं जिन्होंने राजकुमारों की नीति की शिक्षा दी है। यह ग्रन्थ पाँच खण्डों में (या तन्त्रों में) विभाजित है अत: इसका नाम 'पंचतंत्र' पड़ है। लोककथा की दृष्टि से यह अत्यन्त ही महत्वपूर्ण ग्रंथ है।

'हितोपदेश' का स्थान पंचतन्त्र के बाद आता है। नारायण पंडित द्वारा रचित यह रचना 24 वीं शताब्दी की है। 'पंचतन्त्र' के आधार पर ही ये नीतिकथाएँ रची गई। यह अत्यन्त ही मनोरंजन एवं लोक प्रसिद्धग्रन्थ है।

शिवदास द्वारा रचित 'वैताल पंचविंशतिका' राजा विक्रम से सम्बन्धित पच्चीस कथाओं का संग्रह है। इस ग्रंथ का हिन्दी अनुवाद 'वैताल पचीसी के नाम से अत्यन्त ही लोकप्रिय है। इसमें राजा विक्रम की व्यावहारिक बुद्धि तथा प्रत्युत्पत्र-मतित्व का पर्याप्त मिलता है।

'सिंहासन द्वात्रिंशिका' का भी हिन्दी में अनुवाद किया जा चुका है। इसकी कथाएँ भो अत्यन्त ही मनोंरजक एक लोकप्रिय हैं।

सत्तर कहानियों का 'शुकसप्तति' संग्रह अत्यन्त ही लोकप्रिसद्धहै। ईसा की चौदहवीं शताब्दी में ही इसका अनुवाद 'तूतीनाम' के नाम से हो चुका है। इसके अतिरिक्त भट्ट विद्यार द्वारा रचित 'माधवानल' तथा विद्यापति द्वारा रचित 'पुरूष-परीक्षा' भी लोककथा की दृष्टि से विशेष महत्व रखती हैं। 'कथार्णव' शिवदास द्वारा रचित है जिसमें मूर्ख और चोरों की पैंतीस रोचक कथाएँ है। इस प्रकार संस्कृत में इन कथाओं का अक्षय भण्डार है।

(2) पालि :- कथा की दृष्टि से पालि मे जातकों का स्थान महत्त्वपूर्ण है। जातकों में भगवान बुद्ध के पूर्वजन्म की कथाएँ है। इन कथाओं में राजा-महाराजा, सेठ-साहूकार, पशु-पक्षी सभी आ जाते है। इसके कहने स्वयं भगवान बुद्धही हैं। ये कहानियाँ नीति प्रधान हैं। इसकी शैली पंचतंत्राख्यान जैसी है। सुत्रपिटक के दीघनिकाय और माज्झिमनिकाय में कई कथाएँ है। थेरगाथा तथा थेरीगाथा में भी कई सुन्दर कथाएँ है।

(3) जैनसाहित्य (अपभ्रंश) में बौद्धसाहित्य की अपेक्षा अधिक कथाएँ मिलती है। 'नायाधम्म कहाओं' में अनेक रूपक कहानियाँ है। 'उवासगदखाओं' में दस श्रावको की मनोरंजक कथाएँ है। पउम चरिय (पद्मचरित्र) और 'वसुदेवहिडिका' मे राम और की चरित्र-गाथाएँ है। इसमें 'बृहत्कथा' की तरह ही अनेक कथाएँ है। कुछ धार्मिक कथाएँ ऐसी भी है जिनको रोमांटिक रूप में प्रस्तुत किया गया है यथा समराइच्चकहा, उपमितिभव, प्रपंचकथा, तरंगवती आदि। धूर्ताख्यान तथा धर्म- परीक्षा भो इसी प्रकार के ग्रंथ हैं।

(4) हिन्दी :- हिन्दी में लोककथाओं का साहित्य अत्यन्त उच्चकोटि का एवं प्रसिद्धहै। डा0 सत्येन्द्र ने अनेक हस्तलिखित ग्रन्थों का उल्लेख किया है जिसमें लोकवार्ता की परम्परा मिलती है। उन्होंने लिखा है- ''और जब हम हस्तलिखित ग्रन्थों के शोध के पन्ने पलटते हैं तो हमें आश्चर्य में पड़ जाना पड़ता है। अनेकों पुस्तकें हैं जो इस लोकवार्ता को प्रकट करते है।'' (12)

डा0 सत्येन्द्र ने विषय प्रतिपादन की दृष्टि से उन पुस्तकों को साधारणत: सात विभागों में बाँटा है-

(1) लोककहानी :- इसमें वे पुस्तके आवेंगो जो लोकप्रचलित कहानियों को कहानियों के लिये ही सकती है।

(2) धर्ममहात्म्यकथा :-इसमें व्रत से सम्बंधित कथाएँ, व्रत के महात्म्य को प्रकट करने वाली कथाएँ तथा ऐसी कथाएँ आती हैं जिनका धार्मिक महत्व होता है।

(3) अवदान (स्महमदके)

(4) वीरगाथाएँ (ठंससंके)

(5) साधुकथा (भ्ंहमवसवहपबंस)

(6) पौराणिक कथाएँ (डलजीवसवहपबंस)

© UNIVERSAL RESEARCH REPORTS | REFEREED | PEER REVIEWED
ISSN: 2348 - 5612 | Volume: 04 Issue: 03 | July - September 2017

(7) उन कथाओं का वर्ग है जिनमें विविध लौकिक संस्कारों का उल्लेख है।

(8) विविध

कहानियों में सिंहासन बत्तीसी, बैताल पच्चीसी, माधवानल-कामकंदला, तथा चार दग्वेश, हितोपदेश, माधवविनोद, शकबहत्तरी प्रसिद्वकहानियों से समबन्ध रखते है। माधव विनोद में मालती-माधव की कहानी है। मूल ढोला तथा सेंता का ढोला 'ढोला-मारू' की कहानी से सम्बन्धित है। विक्रम बिलास, किस्सा, कथा-संग्रह, मनोहर कहानियाँ विविध कहानियों के संग्रह हैं। किसी किसी में सौ तक कहानियाँ है। (13)

'कनकंमजरी' की कहानी लोकवार्ता की दृष्टि से अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। इसी प्रकार 'राजा चित्रकूट' की कथा भी अत्यन्त लोकप्रिय कथा है। उस्मान की 'चित्रावली' मृगेन्द्र की 'प्रेम-पयोनिधि' चन्दन और मलगिरि रानी की कहानी, अम्बा आमिली और सरावर और नीर की कहानी लोकवार्ता की दृष्टि से कम महत्त्वपूर्ण नहीं हैं। मृगावती तो सूफी ढंग की प्रेम कहानी ही है।

इन हस्तलिखित ग्रन्थों के अतिरिक्त ऐसा लोकवार्ता साहित्य भी है जो ग्रन्थों के रूप में प्राप्त हुआ है। वे 'धर्म-महात्म्य कथा' सम्बन्धी हैं। इनमें गणेश जू की कथा, श्री सत्यनारायण की कथा, पूर्णमासी और शुक्र की कथा, शिवव्रत कथा, एकादशी की कथा आदि अनेक कथाएँ है। जैनियों के व्रतों से सम्बन्धित भी अनेक कथाएँ उपलब्ध होती हैं। सूर्य महात्म्य तथा व्रतकथा-कोष कथाओं में ऐसे संग्रह है जिनमें व्रत के महत्व पर बल दिया गया है। धार्मिक दृष्टि से लिखी गई कथाएँ भी अनेक है जिनमे जैनियों का आदि पुराण हैं। महापद्य पुराण भी जैनियों का ही है।

सन्तकथा सम्बन्धी भी कुछ कथाएँ प्राप्त होती है जिनमें किसी महात्मा के चरित्र का वर्णन होता है। कबीर, नामदेव, पीपा, यशोधर आदि कथाएँ इसी प्रकार की हैं। इनमें चमत्कारो का अधिक वर्णन है जो लोकवार्ता के अंग है। इसी प्रकार किसी वीर पुरूष के वीर चरित्र का भी वर्णन है। ऐसे चरित्र जब लोकवार्ता पद्वति में लिखें जाते हैं तो उन्हें 'अवदान' कहते हैं। हरदौल, पन्नावीरमदे की बात इसी प्रकार की कथाएँ है। परन्तु अधिकांश कहानियों जैनियों की ही है जो 'धर्मोपदेशता' का अंग मानी जाती है।

इस प्रकार उपर्युक्त संक्षिप्त विवेचन से हिन्दी में लिखित तथा मौखिक लोक-कथाओं से हमारा परिचय हो जाता है।

सन्दर्भ

- वही-पृ0 748
- लोकसाहित्य-विज्ञान-पृ0 273
- लोककथाओं की कुछ प्ररूढ़ियाँ - (उपक्रम) - पृ0 9-10
- लोकसाहित्य -विज्ञान - पृ0 219-221
- वही - पृ0 222-263
- लोकसाहित्य -विज्ञान - डा0 सत्येन्द्र - पृ0 511
- लोकसाहित्य विज्ञान-ड0 सत्येन्द्र -पृ0 515